www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

ओ३म् क्रतो स्मर ।

वर्ष–7, अंक–5	जनवरी 2014	माघ
सृष्टि संवत् 1960853114	विक्रमी संवत् 2070	दयानन्दाब्द 190

जीवन रहे न रहे, पर देश स्वतन्त्र रहे ।
ध्वजा फहरती रहे, अमर अपना गणतन्त्र रहे ।

–कविवर कृष्ण मित्र

गणतन्त्र दिवस पर
हार्दिक शुभ कामनाएँ

सम्पादक

मूलचन्द गुप्त

ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर; पंखा रोड, नई दिल्ली-110045

www.thearyasamaj.org

ओ३म्

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇◇

• *परामर्श*

डॉ० धर्मपाल आर्य

(पूर्व कुलपति गुरुकुल कांगड़ी विश्वविद्यालय हरिद्वार)

ए/एच-16, शालीमार बाग, दिल्ली-110088

दूरभाष-011-27472014
011-27471776

• *सम्पादक*

मूलचन्द गुप्त

(पूर्व प्रधान आर्यसमाज दीवानहाल दिल्ली)

• *प्रकाशक*

मूलचन्द गुप्त,

अध्यक्ष, **ओम्-प्रतिष्ठान**

कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली-110045

दूरभाष-9650886070
011-25394083

ई-मेल-Ompratisthan@gmail.com

ओ३म्-सुप्रभा में प्रकाशित लेखों के सभी विचारों से सम्पादक का सहमत होना आवश्यक नहीं है । वे विचार लेखक के अपने हैं ।

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं० 17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र-दिल्ली

उद्देश्य

✧ वैदिक सभ्यता, संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता का पोषण करना, वैदिक विचार-धारा के अनुसार मानव-निर्माण करना, समरस और समेकित समाज का संगठन करना, विश्व भर में सुख और शान्ति की स्थापना करने का प्रयास करना **ओम्-प्रतिष्ठान** का मुख्य उद्देश्य है ।

✧ इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए समय समय पर विभिन्न बहुआयामी गतिविधियों का संचालन किया जाएगा ।

✧ रचनात्मक और प्रेरक साहित्य का सृजन, प्रकाशन और प्रसारण का, इन गति-विधियों में प्रमुख स्थान होगा ।

✧ इस पत्रिका में समय-समय पर आध्यात्मिक, सामाजिक, राजनैतिक, ऐतिहासिक, आर्थिक, नैतिक, वैश्विक चेतना जागृत करने से सम्बन्धित विषयों पर मौलिक लेख तथा समाचार प्रकाशित किए जायेंगे ।

✧ **ओ३म्** परमपिता परमात्मा का निज नाम है । परमात्मा इस सृष्टि का नियन्ता है । सृष्टि से सम्बन्धित सभी विषयों का इसमें समावेश किया जाएगा ।

✧ **ओ३म्-सुप्रभा** का प्रकाशन पूर्णतया निजी स्तर पर किया जा रहा है । उपर्युक्त उद्देश्यों की पूर्ति हेतु प्रति मास देश-विदेश के आर्य विद्वानों, लेखकों, उपदेशकों, कार्यकर्ताओं, प्रकाशकों एवं संस्थाओं को ओ३म्-सुप्रभा **निःशुल्क** भेजी जा रही है।

✧ लघु-पत्रिका के कारण, प्रकाशनार्थ लेख न भेजें ।

✧ सुधी पाठकों से निवेदन है कि वे अपने सुझाव भेजकर कृतार्थ करते रहें ।

www.thearyasamaj.org

ओ३म्-सुप्रभा

वैदिक सभ्यता-संस्कृति तथा राष्ट्रीय एकता की पोषक पत्रिका

रचना, स्थिति और प्रलय, कर्मों का फल जिस का विधान है ।
ओ३म् सुप्रभा ज्ञान अनुपम, सुरभित जिस से जन कुसुम प्राण है ।।

वर्ष–7, अंक–5 | जनवरी 2014 | माघ
सृष्टि संवत् 1960853114 | विक्रमी संवत् 2070 | दयानन्दाब्द 190

ओ३म्-महिमा

सत्येन ना विराधिषि ब्रह्मणेति ।

—महात्मा नारायण स्वामी

अथ तत ऊर्ध्वं उदेत्य नैवोदेता नास्तमेतैकल एव मध्ये स्थाता तदेष श्लोकः ॥

न वै तत्र न निम्लोच नोदियायकदाचन । देवास्तेनाहꣳ सत्येन मा विराधिषि ब्रह्मणेति ॥

न ह वा अस्मा न निम्लोचति सकृद्दिवा हैवास्मै भवति ये एतामेव ब्रह्मोपनिषदं वेद ।

तद्धैतद्ब्रह्म प्रजापतय उवाच प्रजापति र्मनवे मनुः प्रजाभ्यस्त-द्धैतदुद्दालकायऽऽरुणये ज्येष्ठाय पुत्राय पिता ब्रह्म प्रोवाच ॥

इदं वाव तज्ज्येष्ठायपुत्राय पिता ब्रह्म प्रब्रूयात् प्राणाय्याय वाऽन्ते वासिने ॥

नान्यस्मै कस्मैचन । यद्यप्यस्मा इमामद्भिः परिगृहीतां धनस्य पूर्णां दद्यादेतदेव ततोभयू इत्येतदेव ततोभूय इति ॥

छान्दोग्य उपनिषद् 3.11.1-6

अर्थ–(अथ, ततः, ऊर्ध्वः, उदेत्य) अनन्तर उससे ऊपर (नैव, उदेता, न, अस्तम्, एता) नहीं उदित होता है और न अस्त होता है किन्तु (एकल, एव, मध्ये, स्थाता) अकेला ही मध्य में स्थित होता है (तत्, एषः, श्लोकः) उस विषय में एक श्लोक है ॥

www.thearyasamaj.org

(तत्र, न, वै, न, निम्लोच, कदाचन, न उदियाय) वहां निश्चय (द्वन्द्व) नहीं । न (सूर्य्य) अस्त होता है और न कभी उदय होता है । (देवाः, सत्येन, ब्रह्मणा, अहम्, मा, विराधिषि, इति) हे विद्वानो ! सत्यब्रह्म से मैं परे न होऊं ॥

(अस्मै, नह, वै, उदेति, न, निम्लोचति) निश्चय उसके लिये न तो (सूर्य्य) उदय होता है न अस्त होता है (अपितु) (अस्मै, सकृद्, दिवा, ह, एव, भवति) उसके लिए एक बार ही (हमेशा के लिए) दिन हो जाता है (य, एतामेवं, ब्रह्म उपनिषदं वेद) जो इस ब्रह्मोपनिषद को इस प्रकार जानता है ॥

(ह, ब्रह्म, तद, एतद्, प्रजापतये, उवाच) प्रसिद्ध है कि ब्रह्म ने उस इस (उपनिषद् को) प्रजापति को कहा (प्रजापतिः, मनवे) प्रजापति ने मनु को (मनुः, प्रजाभ्यः) मनु ने प्रजा को बतलाया (पिता, आरुणये, उद्दालकाय, ज्येष्ठाय, पुत्राय, तद्, ह, एतद्, ब्रह्म, प्रोवाच) उद्दालक नाम के ज्येष्ठ पुत्र को इस प्रसिद्ध ब्रह्मविज्ञान को कहा ॥

(पिता, वाव, ज्येष्ठाय पुत्राय) पिता निश्चय ज्येष्ठ पुत्र से (वा, प्राणाय्याय, अन्ते वासिने, तद्, इदं, ब्रह्म ब्रूयात्) अथवा प्राण तुल्य शिष्य से उस इस ब्रह्म विज्ञान को कहे ॥5॥

(यद्यपि, अद्भिः, परिगृहीता, धनस्य इमाम् अस्मै, दद्यात्) यदि समुद्रों से परिवेष्ठित और धन से पूर्ण इस (पृथिवी) को उसे (आचार्य्य को) दे देवे (तो भी) (अन्यस्मै, कस्मैचन) अन्य किसी से (न कहे) क्योंकि (ततः, एतत्, भूयः इति) उस (पृथिवी के दान) से यही (ब्रह्मविद्या का दान) अधिक है (एतत्, एव, ततः, भूयः, इति) यही (दान) उस (दान) से अधिकतर है ॥

ओ३म् ध्वजा

"जिस "ओ३म्" की ध्वजा को संसार में गाड़ना था, वह तो अभी समाज मन्दिरों के अन्दर ही गड़ा है । इसलिए निराश न होकर आर्यसमाज के नवयुवकों को समाज के कार्य में लग जाना चाहिए । परमात्मा उनके अवश्य सहायक होंगे ।"

–स्वामी श्रद्धानन्द

(सम्पादकीय-"सद्धर्म प्रचारक", 31 अक्तूबर, 1911)

www.thearyasamaj.org

ओ३म् महिमा

–रमण नावलीकर

सर्वोपकारी 'ओ३म्' दयालु, अनादि व अनन्त है ।
जो कूटस्थ है पर रखता ब्रह्माण्ड को भ्रमन्त है ।

अपनी ईक्षण शक्ति से देता प्रकृति को प्राण वो
देखो आकाशस्थ खरबों प्रदार्थ कैरस भ्रमन्त है !

सत्प्रकृति, सत्चित् जीव है स्वयं जो सच्चिदानन्द है ।
जीव, प्रकृति एकदेशी बहुसंख्यक-अनन्त है ।

सत्चित् जीव को शुद्धानंद चाहिये किसी से मिलेगा ?
प्रकृति की अपेक्षा ओ३म् का आनन्द शुद्धा-अनन्त है ।

निर्मोही होकर जीव को ओ३म् में निमग्न होना है ।
और इसी की ही कृपा से पाना मोक्षानंद अनन्त है ।

झण्डा चौक, नावली, 377,355
ता० जिला-आणंद (गुजरात)

स्वाध्याय करें

आर्यसमाजियों की अधिक संख्या प्रतिदिन अपने वेदादि धर्मग्रन्थों का अनुशीलन करना अपना कर्तव्य नहीं समझते । यदि प्रतिदिन किसी न किसी सच्छास्त्र के अध्ययन में थोड़ा समय लगा दिया जावे तो कभी सम्भव नहीं कि इन गम्भीर विषयों की ओर से इतना औदासीन्य हो और इनकी जगह हलके और अगम्भीर साहित्य की ओर लोगों का ध्यान जावे ।

स्वाध्याय में आश्चर्य जनक शक्ति है । वह मनुष्य के हलकेपन को नष्ट कर देता है, सच्छास्त्रों द्वारा महान् आत्माओं की संगति से मनुष्य का मन नम्र, अगर्वित और अपने असली मूल्य को समझने के योग्य हो जाता है । अतएव प्रत्येक आर्य को उचित है कि वह हर दिन अपना थोड़ा समय स्वाध्याय में लगावे । इसके साथ आर्य विद्वानों का भी कर्तव्य है कि वे स्वयं थोथे विवादों को छोड़कर वेदादि गम्भीर ग्रन्थों के विचार में प्रवृत्त हों, और लोगों की रुचि भी सुधारने का यत्न करें ।

–स्वामी श्रद्धानन्द

[सद्धर्म प्रचारक, 29 दिसम्बर 1910 के सम्पादकीय का एक अंश]

www.thearyasamaj.org

सम्पादकीय

'ओ३म् सुप्रभा' का जनवरी 2014 का अंक सुधी पाठकों के सम्मुख प्रस्तुत करते हुए हमें हार्दिक प्रसन्नता की अनुभूति हो रही है । इस अंक में भी हम यथापूर्व वैदिक विद्वानों के सामयिक लेख प्रस्तुत कर रहे हैं । हमें पाठकों के अनेक सत्परामर्श प्राप्त हुए हैं । पाठकों के सत्परामर्श हमारा सम्बल हैं ।

गणतन्त्र दिवस

भारतवर्ष में 26 जनवरी 1950 को अपना संविधान लागू किया गया था । हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने स्वायत्त धर्मनिरपेक्ष गणतन्त्र राज्य की अवधारणा को स्वीकार करते हुए सभी के लिए सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास की स्वतन्त्रता तथा समानता एवं भाईचारे के सिद्धान्त को अपनाया था । हम प्रतिवर्ष उत्साहपूर्वक 26 जनवरी को, गणतन्त्र-दिवस के रूप में मनाते हैं ।

विश्व के आर्य वेद को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं । सृष्टि के आदि में परमात्मा ने मनुष्य को सन्मार्ग दिखाने और कर्तव्याकर्तव्य का उपदेश करने के लिए वेद का ज्ञान दिया । मनुष्य का व्यक्तिगत जीवन, उसका पारिवारिक, सामाजिक, और राष्ट्रीय जीवन, किस प्रकार समृद्ध उन्नत और सुखी बन सकता है, इस सम्बन्ध में सभी प्रकार का आवश्यक ज्ञान वेद में प्राप्य है । जो वेद को भली-भांति समझ और जान लेता है, उसे सैन्य-संचालन, तथा राज्य-शासन व्यवस्था का सम्यक् ज्ञान हो जाता है और वह दण्डनीति तथा न्याय-व्यवस्था को भी सुचारु रूप से क्रियान्वित करने में सक्षम हो जाता है ।

महर्षि दयानन्द सरस्वती प्राचीन ऋषि मुनियों की परम्परा के एक महान् ऋषि थे । उन्होंने अपने अमर ग्रन्थ सत्यार्थप्रकाश के छठे समुल्लास में राज-धर्म का प्रतिपादन किया है । उन्होंने इसमें अनेक ग्रन्थों के सन्दर्भ देते हुए वैदिक राजनीति का अति उज्जवल चित्र प्रस्तुत किया है । उन्होंने लिखा कि राजा को निरंकुश एकतन्त्र और वंशानुगत शासक नहीं होना चाहिए । उसे प्रजा द्वारा चुना हुआ शासक होना उचित है, उसे प्रजा के अधीन रहना चाहिए। राज्य के उत्तम संचालन के लिए विद्यार्थ सभा, धर्मार्य सभा और राजार्य सभा—ये तीन सभाएं होनी चाहिए । इन सभाओं में आर्य शब्द का प्रयोग यह संकेत करता है कि इनके सदस्य आर्य अर्थात् श्रेष्ठ, परोपकारी और धार्मिक प्रवृत्ति के होने चाहिएं । राजा को इन तीनों सभाओं की सम्मति, परामर्श और सहयोग से राज्य संचालन करना चाहिए ।

अथर्ववेद के सातवें काण्ड के 18वें सूक्त में राज्य की राष्ट्रसभा का

www.thearyasamaj.org

हमारा गणतन्त्र

–डॉ० राजेन्द्र प्रसाद

एक दिन था जब राजे-महाराजे तथा बादशाह हुआ करते थे और व्यक्ति ही सब कुछ होता था। अब हमने गणराज्य बना लिया है। गणराज्य का अर्थ होता है किसी एक व्यक्ति का राज्य नहीं बल्कि सबका राज्य। हमारे गणराज्य में न कोई प्रजा है और न कोई राजा। या यों कहें कि सबके सब प्रजा हैं या राजा। तो हम सब बराबर हैं और बराबर रहकर सब लोग एक-दूसरे की सहायता करते हैं तथा एक दूसरे के सुख-दु:ख में सम्मिलित होते हैं। हमारा कर्तव्य मिल-जुलकर भारत का उत्थान करना है।

[भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ० राजेन्द्र प्रसाद द्वारा उत्तरपूर्व सीमान्त अभिकरण (असम) में अध्यापक प्रशिक्षण स्कूल में 23 फरवरी सन् 1954 को दिये गये भाषण के अंश। –सम्पादक]

वर्णन है। वहां राष्ट्रसभा के दो सदनों का वर्णन किया गया है। एक सदन को 'सभा' और दूसरे सदन का नाम 'समिति' है। राष्ट्रसभा के 'सभा' नामक सदन में जनता के प्रतिनिधि होंगे। वे सभी सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व करेंगे। 'समिति' नामक सदन में विद्या एवं चरित्र की दृष्टि से श्रेष्ठ व्यक्ति होंगे। उनके द्वारा निर्मित कानूनों में लोक कल्याण की भावना ही कार्य करेगी। वहां पर निजी तुच्छ स्वार्थ नहीं होगा। इस प्रकार वैदिक राज्य में राजा; प्रजा द्वारा चुना व्यक्ति होता है, और उसे राजकाज में सहयोग देने तथा मार्गदर्शन कराने के लिए राजसभा भी प्रजा द्वारा ही चुनी हुई होती है। राजा के ऊपर राजसभा का नियन्त्रण रहता है। महर्षि दयानन्द सरस्वती ने चक्रवर्ती राज्य का उल्लेख किया है। सारी पृथ्वी का एक सार्वभौम चक्रवर्ती राज्य भी होना चाहिए। ऐसा राज्य होने पर भूमण्डल के समस्त राष्ट्रों के आपसी विवाद और मतभेद मिट सकते हैं।

वेदों में जिस राज्यतन्त्र का प्रतिपादन किया गया है, उसमें स्त्रियों की राजनैतिक स्थिति ठीक पुरुषों के समान ही रखी गई है। वैदिक राज्य में सभी के लिए अनिवार्य और सार्वभौम शिक्षा की व्यवस्था है। वैदिक राज्य में न्याय व्यवस्था को सर्व-सुलभ बनाया जायेगा। वैदिक राज्य में सत्य, न्याय, दया, परोपकार, सहिष्णुता, तप, त्याग और संयम पर बल दिया गया है। वैदिक राज्य में समस्त व्यवस्था न्यायपूर्ण धर्मानुसार तथा उदार होगी।

www.thearyasamaj.org

महात्मा गांधी स्मृति दिवस

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का जन्म 2 अक्तूबर 1869 को तथा निधन 30 जनवरी 1948 को हुआ। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के राष्ट्र के ऊपर किए गए उपकारों को स्मरण करने के लिए हम उनका जन्म-दिवस तथा स्मृति-दिवस मनाते हैं।

हमारे राष्ट्र नायक उनके प्रति अपने श्रद्धासुमन राजघाट तथा स्मृति स्थल पर जाकर अर्पित करते हैं। महात्मा गांधी ने समय समय पर राष्ट्रीय, सामाजिक तथा वैयक्तिक कल्याण के लिए विभिन्न विषयों पर अपने विचार व्यक्त किए हैं। वे विचार आज भी प्रासंगिक तथा अनुकरणीय हैं।

स्वराज्य का अर्थ–

स्वराज्य एक पवित्र शब्द है, वह एक वैदिक शब्द है, जिसका अर्थ आत्म-शासन और आत्म-संयम है। यंग इंडिया 19.3.31

स्वराज्य से मेरा अभिप्राय है; लोक सम्मति के अनुसार होने वाला भारत का शासन। हिन्दी नवजीवन-29.1.25

स्वदेशी

स्वदेशी की भावना का अर्थ है हमारी वह भावना, जो हमें दूर को छोड़कर अपने समीपवर्ती प्रदेश का ही उपयोग और सेवा करना सिखाती है। यदि स्वदेशी को व्यवहार में उतारा जाए, तो मानवता के स्वर्ण-युग की अवतारणा की जा सकती है।

स्पीचेज एण्ड राइटिंग्स ऑफ महात्मा गांधी-पृ० 336.44

गोरक्षा

हिन्दू धर्म की मुख्य वस्तु है गोरक्षा। गोरक्षा मुझे मनुष्य के सारे विकास-क्रम में सबसे अलौकिक वस्तु मालूम हुई। हिन्दुस्तान में गाय ही मनुष्य का सबसे सच्चा साथी, सबसे बड़ा आधार था। यही हिन्दुस्तान की एक कामधेनु थी। गाय दया-धर्म की मूर्तिमत्त कविता है। हिन्दुओं की परीक्षा, तिलक करने, स्वरशुद्ध पत्र पढ़ने, तीर्थ यात्राएं करने या जात-बिरादरी के छोटे-छोटे नियमों को कट्टरता से पालने से नहीं होगी, बल्कि गाय को बचाने की उनकी शक्ति से होगी। यंगइण्डिया-6.10.21

शराब और अन्य मादक द्रव्य

यदि मुझे एक घन्टे के लिए भारत का डिक्टेटर बना दिया जाय तो मेरा पहला काम होगा कि शराब की दुकानों को बिना मुआवजा दिये बंद

(शेष पृष्ठ 20 पर)

www.thearyasamaj.org

जन्मशती (20 जनवरी, सन् 2014) पर विशेष-

स्वामी विद्यानन्द सरस्वती

[आर्यसमाज के सुविख्यात विद्वान् स्वामी विद्यानन्द सरस्वती पूर्वनाम पं० लक्ष्मीदत्त दीक्षित का जन्म उत्तर प्रदेश के बिजनौर नगर में 20 जनवरी 1914 को हुआ । आपकी शिक्षा दीक्षा डी० ए० वी० कॉलेज होशियारपुर तथा डी० ए० वी० कॉलेज लाहौर में हुई । आपका विवाह आर्यसमाज के सुप्रसिद्ध शास्त्रार्थ महारथी पं० मुरारीलाल शर्मा की पौत्री तथा पं० देवेन्द्रनाथ शास्त्र की पुत्री श्रीमती शकुन्तला देवी काव्यतीर्थ से हुआ । आप होशियारपुर, दिल्ली तथा पानीपत में अध्यापक रहे । आप आर्य कॉलेज पानीपत के सुदीर्घ काल तक प्रिंसिपल रहे । आप पंजाब विश्वविद्यालय के फैलो मनोनित किए गए । आप गुरुकुल वृन्दावन के आचार्य भी रहे । आपने आर्य केन्द्रीय सभा दिल्ली की 1944 में स्थापना की । आप सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के संयुक्त मंत्री रहे । आप ने पंजाब में चलाए गए हिन्दी रक्षा आन्दोलन में विशेष भूमिका का निर्वहन किया । आपने 27 जुलाई 1980 को संन्यासाश्रम में प्रवेश किया । आपने हिन्दी, संस्कृत तथा अंग्रेजी में 50 से भी अधिक उच्च कोटि के ग्रन्थ लिखे । आपको विभिन्न संस्थाओं द्वारा सम्मानित किया गया । आपको 'अनादि तत्त्वदर्शन' पर गंगाप्रसाद पुरस्कार प्रदान किया गया । आपको 'तत्त्वमसि' पर उत्तर प्रदेश संस्कृत अकादमी द्वारा पुरस्कृत किया गया । आपको आर्यसमाज सान्ताक्रूज मुम्बई द्वारा वेद-वेदांग पुरस्कार प्रदान किया गया । आपको सत्यार्थप्रकाश न्यास उदयपुर की ओर से भी पुरस्कृत किया गया ।

आपका निधन 30 जनवरी 2003 को हुआ । स्वामी जी अत्यन्त सुलझे हुए विचारों के वैदिक विद्वान् थे । आर्यसमाज और महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती के प्रति अगाध प्रेम और श्रद्धा होने के कारण आपको आर्यसमाज की वर्तमान स्थिति से बहुत वेदना होती थी । उसी वेदना को आप ने अपने अनेक भाषणों एवं लेखों में प्रकट किया था । स्वामी जी की जन्मशती के अवसर पर आर्यसमाज का प्रबुद्ध नेतृत्व वर्ग, स्वामी जी के वेदना पर गम्भीरता पूर्वक मनन करेगा । इसी विश्वास के साथ स्वामी जी के अभिनन्दन ग्रन्थ (1995, सम्पादक-वेदाचार्य डॉ० रघुवीर वेदालंकार) से उन्हीं के कतिपय विशिष्ट लेखों के अंश प्रस्तुत हैं । -सम्पादक]

सत्यार्थप्रकाश और हम

तनिक विचारें कि शताब्दी समारोह का करना कहीं आज का युग-धर्म अथवा फैशन तो नहीं बन गया । यह ध्रुव सत्य है कि प्रदर्शन प्रधान इन शताब्दी समारोहों की बाढ़ में गम्भीर चिन्तन या ठोस काम करने की भावना सर्वथा लुप्त होती जा रही है । आये दिन होने वाले इन सभी शताब्दी समारोहों को अखिल भारतीय रूप देने की चेष्टा भी हम कर देते हैं । प्रत्येक समारोह में आर्य-जनता के लाखों नहीं करोड़ों रुपये व्यय हो जाते हैं । इतना जरूर है कि भीड़ की दृष्टि से यह समारोह सफल होते हैं । आयोजकों को विपुल

www.thearyasamaj.org

धन राशि भी प्राप्त हो जाती है । किन्तु इन सब के बदले आर्यसमाज को क्या उपलब्धि हुई–इसे न हम जानते हैं और न हमारे नेता ही बताने में समर्थ हैं । आवश्यकता तो इस बात की है कि वाहवाही से दूर रह कर किसी योजना को तैयार करके उसे व्यवहारिक रूप देकर रचनात्मक कार्य किये जायें ।

अब किसी रूप में सही, सत्यार्थप्रकाश व्यापक रूप में चर्चा का विषय बना हुआ है । सत्यार्थप्रकाश का प्रचार और प्रसार करना भी आवश्यक है किन्तु इससे अधिक आवश्यक है उसमें लिखी बातों की ओर ध्यान देकर उन्हें व्यावहारिक रूप देना । समारोहों में सम्मिलित होने वाले हजारों और लोग भले ही सत्यार्थप्रकाश के नाम से परिचित हों किन्तु उसमें क्या क्या लिखा है, अनेकशः लोग अनभिज्ञ हैं । विचारशील लोग सहज में अनुमान लगा सकते हैं । इतना बड़ा परिश्रम और व्यय केवल भीड़ इकट्ठी कर लेने तक समाप्त न हो जाये वरन् कुछ रचनात्मक और ठोस उपलब्धि हो जायें तभी यह समारोह किंचित श्रेयस्कर बन सकेंगे । आर्यसमाजी जनता, आर्यसमाज के नेताओं, विभिन्न सभाओं के अधिकारियों, संसद् तथा विधान सभाओं के सदस्यों का कर्तव्य है कि अपनी-अपनी सीमाओं में सत्यार्थप्रकाश की मान्यताओं को व्यवहारिक रूप देने का यत्न करें ।

आर्यसमाज अब क्या करें ?

आर्यसमाजों, आर्यप्रतिनिधि सभाओं और आर्यसमाजी पत्र-पत्रिकाओं की संख्या बढ़ती जा रही है आये दिन मनाई जाने वाली शताब्दियों के नाम पर होने वाले बड़े-बड़े जलसों और जलूसों की भीड़ देखकर लगता है जैसे सारा देश आर्यसमाजी बन गया है । समय-समय पर आयोजित रेल यात्राओं को देखकर लगता है कि हम दिग्विजय करने निकल पड़े हैं । विदेशों में होने वाले आर्यसम्मेलनों की बातें पढ़-पढ़कर लगता है कि 'कृण्वन्तो विश्वमार्यम्' का स्वप्न पूरा होने में अब अधिक देर नहीं है । परन्तु वास्तविक स्थिति कुछ और है । पहले की अपेक्षा मत-मतान्तरों की संख्या कई गुना बढ़ गई है । पहले एक समय में ईश्वर का एक अवतार होता था । अब एक साथ दर्जनों भगवान् धरती पर विचरण कर रहे हैं । पहले ईश्वर का आरोप करके मूर्ति की पूजा की जाती थी । अब मनुष्यों की मूर्तियों और समाधियों की पूजा होने लगी है ।

पहले जो काम व्यक्तिशः होते थे वे अब योजनाबद्ध रूप में किये जाने लगे हैं । धार्मिक अन्ध-विश्वासों को बढ़ावा देने के लिए करोड़ों रुपये खर्च किये जा रहे हैं । देश के बड़े-बड़े नेता अपने अन्धविश्वासों का खुला प्रदर्शन

www.thearyasamaj.org

कर रहे हैं । जनता का मार्गदर्शन करने और प्रगतिशील होने का दम भरने वाले बड़े-बड़े अखबार करोड़ों की संख्या में छप कर चमत्कारों और फलित ज्योतिष की सच्चाई में विश्वास बढ़ा रहे हैं । रेडियों और टेलीविजन के माध्यम से मूर्तिपूजा, अवतारवाद, रामलीला आदि का धुआंधार प्रचार हो रहा है ।

शास्त्रों का कथन है–'यत्ने कृत यदि न सिध्यति कोऽत्र दोषः' अर्थात् यत्न करने पर भी यदि सफलता न मिले तो सोचना चाहिए कि प्रयत्न में कहां दोष है ? दवा करने पर भी अगर मर्ज बढ़ता जाए तो दवा में दोष हो और चाहे रोग के निदान में–कहीं न कहीं न दोष अवश्य है । निश्चय ही हमारी प्रचार प्रणाली में दोष आ गया है । विरोधी प्रचार के माध्यम बड़े सशक्त हैं। सिनेमा, रेडियो, अखबार आदि की पहुंच तो प्रतिदिन करोड़ों तक है । हमारे साप्ताहिक सत्संगों की उपस्थिति तो उंगलियों पर गिनी जा सकती है । बरसों बीत जाने पर चेहरे नहीं बदलते–चेहरे भी झुर्रीदार । वार्षिकोत्सवों तक में हमारे सब सदस्य भी शामिल नहीं होते, आर्यसमाजेत्तर लोगों की तो बात ही क्या । हमारे कार्यक्रम इस प्रकार निश्चित होने चाहिए कि नित नए लोगों में हमारी बात पहुंच सके । एतदर्थ निम्नलिखित सुझावों पर ध्यान देना चाहिए–

1. परिवारिक सत्संगों की योजनाबद्ध व्यवस्था की जाए । जिस सदस्य के यहां सत्संग होना हो उसे चाहिए कि आग्रहपूर्वक अपने सम्बन्धियों, पड़ोसियों तथा मित्रों की उसी प्रकार आमंत्रित करे जिस प्रकार अपने यहां होने वाले संस्कार आदि के अवसर पर आमंत्रित किया जाता है। आर्यसमाजी न होने के कारण परिवार में होने वाले सत्संग में सम्मिलित होना अपना कर्तव्य समझेंगे । ऐसे सत्संगों में व्यवहारोपयोगी मण्डनात्मक भाषण करना ही उचित होगा । प्रसंगवश सिद्धान्तों की चर्चा की जा सकती है ।

2. साप्ताहिक सत्संगों का कार्यक्रम ऐसा होना चाहिए कि पारिवारिक सत्संग से प्रेरणा पाकर यदि कोई नया व्यक्ति साप्ताहिक सत्संग में पहुंचे तो वह निराश न हो । समस्त कार्यक्रम पहले से निश्चित हों । यज्ञ, भजन और उपदेश का कार्यक्रम क्रमशः चलता रहे ।

3. वार्षिकोत्सव में 2-3 व्याख्यान खण्डनात्मक अवश्य कराये जायें । मूर्तिपूजा, अवतारवाद, मृतक श्राद्ध, अद्वैतवाद, वेदों का अपौरुषेयत्व, वेदों में इतिहास, वेदों में मांस-मदिरा, राधास्वामी, सांईबाबा, रजनीश आदि के मतमतान्तरों, सायण आदि की तुलना में महर्षि दयानन्द के वेदभाष्य के श्रेष्ठता आदि विषयों पर भाषण होने चाहिए । आमंत्रित विद्वानों को पहले ही उनके भाषण के विषय में सूचित कर दिया जाए । उत्सव के कार्यक्रम में वक्ता उनके नाम के साथ उसके भाषण का विषय भी लिखा जाए । ऐसे व्याख्यानों का विज्ञापन विशेष रूप से किया जाए ।

www.thearyasamaj.org

4. वर्ष में एक बार किसी विषय पर शास्त्रार्थ का आयोजन किया जाये । अपने-अपने विद्वान् का उत्साह बढ़ाने के लिए तथा उत्सुकता के कारण शास्त्रार्थ में आर्यसमाजेत्तर श्रोता शास्त्रार्थ में सहज ही आ जाते हैं। यहां आकर वे हमारी बात सुनेंगे और उनमें से कुछ-कुछ लोगों के हृदय में हमारी सच्चाई अंकित होगी ।

वेदों के प्रति श्रद्धा

हम समझते थे कि जैसे जैसे लोग वेदों को जानेंगे, वैसे वैसे बुद्धिजीवी वर्ग में उनके प्रति श्रद्धा बढ़ेगी । किन्तु वस्तुस्थिति इसके सर्वथा विपरीत है। बौद्धिक स्तर पर सर्वत्र वे व्यक्ति छाये हुए हैं, जिन्होंने भारतीय विश्वविद्यालयों में संस्कृत में एम० ए० करते समय ही वेदों की झलक देखी है । उन्हें पढ़ाने वाले प्राध्यापक स्वयं सायणादि पौराणिक एवं पूर्वाग्रहों से युक्त पाश्चात्य विद्वानों की दृष्टि से प्रभावित हैं । वेदों का जो स्वरूप इन छात्रों के सामने आता है, उसे देखने के बाद वेद अपौरुषेय और सब सत्य विद्याओं के ग्रन्थ न रह कर साधारण लोगों द्वारा रचित किस्से कहानियों की पुस्तकें रह जाती हैं । इतिहास में एम० ए० करने वाले छात्रों को वैदिक कालीन इतिहास के प्रसंग में भी यही सब कुछ पढ़ाया जाता है । वे पढ़ते हैं कि यहां के आदिवासी कोई और हैं, आर्य लोग तो बाहर से आकर यहां के आदिवासियों से लड़ाइयों में जीत कर यहां बस गए हैं । संस्कृत और इतिहास में एम० ए० करने वाले ये छात्र अध्यापक बन कर स्कूलों और कालिजों में अपने छात्रों को वही सब कुछ पढ़ाते हैं, जो वे पढ़ कर आये हैं । इस प्रकार शिक्षित वर्ग वेदों के इसी स्वरूप को जानता और मानता है । इसे देख सुनकर उसके मन में वेद के प्रति विरक्ति एवं घृणा के भाव ही उत्पन्न होते हैं । आवश्यकता इस बात की है कि–

क–आर्यसमाज के एतदर्थ समर्पित उच्चकोटि के विद्वान् आर्यसमाज के उत्सवादि का मोह छोड़कर विश्वविद्यालयों व कालेजों को अपना केन्द्र बनायें, और वहां अध्यापन कार्य में लगे संस्कृत तथा इतिहास विभाग के अध्यापकों से सम्पर्क स्थापित कर वेदों के सम्बन्ध में उनका दृष्टिकोण ठीक करें । उनके दिमाग बदल जाएं तो कालान्तर में सारा सिलसिला बदल जाएगा।

ख–पौराणिक विद्वानों के साथ मिलकर वेद सम्बन्धी गोष्ठियों का आयोजन किया जाये, जिनमें प्रेमपूर्वक वार्तालाप द्वारा पक्ष–विपक्ष में विचार करके उन्हें अपने पक्ष में लाने का प्रयत्न हो । सार्वजनिक रूप में शास्त्रार्थ के समय 'अहम्' के कारण हठ और

www.thearyasamaj.org

दुराग्रह सत्य के ग्रहण करने और असत्य के छोड़ने में बाधक बन जाते हैं ।

हमारी शिक्षण संस्थायें

विदेशी शासन के जमाने में हमारी संस्थायें राष्ट्रवाद की पनीरी का काम देती थीं । उनमें पढ़ने पढ़ाने वालों पर आर्यसमाज की छाप होती थी । किन्तु अब उनका कोई उपयोग नजर नहीं आता । हमारे कालेजों, स्कूलों के प्रिंसिपलों और मुख्याध्यापकों में भी अब शायद ही कोई आर्यसमाजी भावना के व्यक्ति हों । यदि कोई दिखाई भी देते हैं, तो केवल इसलिए और उस दिन तक जब तक वे कुर्सी पर बैठे हैं । उनके अन्दर आर्यसमाज कहीं नहीं । संस्था के संचालन का कार्य वे बड़ी कुशलता और तत्परता से करते हैं, किन्तु सिद्धान्त, व्यवहार, आचार-विचार, रहन-सहन आदि की दृष्टि से उनमें और दूसरी संस्थाओं के आचार्यों में कोई विशेष अन्तर नहीं मिलेगा । हमारी शिक्षण-संस्थाओं में और दूसरी शिक्षण संस्थाओं में अब नाममात्र का अन्तर रह गया है । और वह नाममात्र हमें बहुत मंहगा पड़ रहा है । आर्यसमाजों या प्रान्तीय समाजों में बड़े पैमानों पर होने वाले झगड़ों के मूल में उनके अधीनस्थ गुरुकुल कॉलेज ही मिलेंगे ।

आर्यों का राज्य

हम प्राचीन काल में आर्यों के आदर्श एवं चक्रवर्ती राज्य पर गर्व करते हैं और फिर से वे दिन लाने के लिए आर्यसमाज को सामूहिक रूप से राजनीति में घसीटने की बात करते हैं । किन्तु जितनी कुछ सत्ता आर्यों के हाथ में है, उसके सहारे क्या हम ऐसा कुछ करके दिखा पाये हैं; जिससे लोगों को हमारे बारे में औरों से अच्छी राय बनाने का आधार मिल सके । जो अपने सीमित क्षेत्र में स्थानीय आर्यसमाजों, अपने प्रान्तीय एवं सार्वदेशिक संगठनों और तदधीन संस्थाओं का संचालन नहीं कर पा रहे, और इस निमित्त आपस में सिरफुटोवल कर प्रतिदिन अदालतों में खड़े रहते हैं, उनके हाथ में शासनतन्त्र सौंप कर देश निश्चिन्त हो जायेगा, कौन कैसे विश्वास करेगा ? कभी श्री हरविलास शारदा और श्री घनश्याम सिंह गुप्त ने अपने व्यक्तिगत प्रभाव से ऐसे कानून बनवाने में सफलता प्राप्त की थी, जो आर्यसमाज के सिद्धान्तों के पोषक थे । आज राजनीति में डूबे हमारे नेता इतना भी नहीं कर पा रहे हैं । ......राष्ट्र को पवित्र लोगों का नेतृत्व चाहिये, ऐसे लोगों का जिनमें स्वार्थ, पक्षपात, ईर्ष्या-द्वेष, लोभ-लालच का लेश न हो, और जो किसी भी प्रकार के व्यसनों से परे हो । यदि ऐसे पवित्र लोगों का नेतृत्व हम प्रदान कर सकें, तो यही आर्य राज्य

www.thearyasamaj.org

के निर्माण के लिए हमारा सब से बड़ा योगदान होगा ।

नया खून

आवश्यकता पड़ने पर जब किसी आदमी को खून चढ़ाया जाता है तो इस बात का ध्यान रखा जाता है कि चढ़ाया जाने वाला खून रोगी के खून के वर्ग का हो, उसकी प्रकृति के अनुकूल हो । विपरीत गुणों वाला खून चढ़ाये जाने पर लाभ के बदले हानि हो सकती है । आर्यसमाज में नये खून के नाम पर जिन लोगों की भरती की गई, और की जा रही है, वे आर्यसमाज के सिद्धान्तों और मान्यताओं से कोसों दूर हैं । उन्हें आर्यसमाज में लाने वाले लोग अपनी-अपनी स्थिति को मजबूत करने के उद्देश्य से चुनाव में हाथ खड़ा करने के लिए लाते हैं, और आने वाले भी किन्हीं स्वार्थों से प्रेरित होकर ही आते हैं । आर्यसमाज के नियमोपनियम, विधि-विधान, आचार-विचार, क्रियाकलाप आदि की उन्हें जानकारी नहीं होती । ऐसे लोगों का मुख्य लक्ष्य राजनीतिक होता है । राजनीति में धर्म चला जाये, तो राजनीति पवित्र हो जाती है, किन्तु यदि धर्म में राजनीति आ जाये तो धर्म भ्रष्ट हो जाता है । आज आर्यसमाज की स्थिति बहुत कुछ ऐसी ही है ।

आवश्यकता इस बात की है कि उसके संगठन में प्रमुखता उन लोगों की हो जो विद्वान् हों, सात्विक वृत्तिवाले हों, व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक रूप में ईमानदार हों, तथा चौबीसों घण्टे आर्यसमाज के ही लिए हों ।

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

हमारे संगठन के निर्माण की प्रक्रिया नीचे से ऊपर को है, ऊपर से नीचे को नहीं । इसलिए हमारे नारों का क्रम होना चाहिए-कृण्वन्तः स्वकीयमार्यम्, कृणवन्तः परिवारमार्यम्, कृण्वन्तो राष्ट्रमार्यम्, कृण्वन्तो विश्वमार्यम् । आर्यसमाजों की संख्या भले ही थोड़ी हो, सदस्यों की संख्या भी थोड़ी हो, किन्तु जितने भी हों खरे हों । खोटे सिक्कों से जेब भरी भी हो, तो किस काम की ? विधि-विधान के अनुसार नीचे से ऊपर तक संगठन का निर्माण हो । वेद का ज्ञान और तदनुकूल आचरण ही हमारी समस्त गतिविधियों का आधार हो ।

●

अनु सꣳरभध्वम् ।

एक दूसरे के अनुकूल होकर कर्म करो–आगे बढ़ो ।

तुम मिलकर आगे बढ़ो ।

www.thearyasamaj.org

आर्य पुत्रो !

–प्रियवीर हेमाइना

आर्य-पुत्रो ! आर्य-पुत्र की शान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
भले प्रांत हो अलग-अलग, और भिन्न हो भाषाएं ।
तो भी ओ३म्-चेतना के संग, रखना सम्मिलित आशाएं ॥
आगे बढ़कर हमको, अब उत्थान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
निज वैदिक संस्कृति के संग, हमने रंग बिखेरे हैं ।
'ज्योतिर्गमय तमसो मा' से, हमने रचे सवेरे हैं ॥
हम सबको नव-सृजन का, अरमान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
वेद-आज्ञा पर चलकर हमने, राम-कृष्ण से पाये हैं ।
आर्य-पुत्र की श्रेणी में, हमने नाम लिखाये हैं ॥
कायरता अब नहीं, विजय-अभियान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
पश्चिम की प्रदूषित वायु, हम सबको है निगल रही ।
आर्य-सभ्यता धीरे-धीरे, क्षीण हो रही पिघल रही ॥
प्रखर चेतना पूरब का, वरदान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
वेदों की शिक्षाएं दिव्य, उनका ठीक प्रचार करें ।
दयानन्द के सपनों को हम, शीघ्र यहां साकार करें ॥
इण्डिया नहीं आर्यावर्त्त का, सम्मान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥
आर्यावर्त्त है आर्यों का, आर्य भावना खो गई आज ।
भ्रष्टाचार अनाचार की, है छा गई बुराई आज ॥
करने हैं सब दुरित दूर, यह ज्ञान लिये जीना है ।
चक्रवर्ती हम थे, यह आह्वान लिये जीना है ॥

– 318, विपिन गार्डन, उत्तम नगर, नई दिल्ली-110059
मो० 7503070674

www.thearyasamaj.org

पं० रामनिवास "विद्यार्थी"

[पुरानी पीढ़ी के शिक्षाविद्, यशस्वी कवि तथा वैदिक विद्वान् पं० रामनिवास 'विद्यार्थी' का गत 21 नवम्बर 2013 को मेरठ में निधन हो गया । आपका जन्म उत्तर प्रदेश के बागपत जनपद के ग्राम फजलपुर (सुन्दरनगर) में कट्टर आर्यसमाजी तथा संस्कृत के विद्वान् पं० कृष्णलाल शर्मा के पुत्र के रूप में अक्तूबर सन् 1927 को हुआ था । आपने एम० ए० (हिन्दी व संस्कृत), शास्त्र चूड़ामणी, साहित्य रत्न, साहित्यालंकार, विज्ञान विशारद आदि उपाधियां प्राप्त की तथा चार दशकों तक विभिन्न् विद्यालयों में शिक्षण-कार्य किया । आर्यसमाज फजलपुर (सुन्दरनगर) के आप छः दशकों तक पदाधिकारी रहे, आर्य प्रतिनिधि सभा उत्तर प्रदेश के मन्त्री रहे । पंजाब हिन्दी-रक्षा सत्याग्रह में भाग लेकर छः मास फीरोजपुर जेल में रहे । आपने "आर्यमित्र" (सा०) का सम्पादन भी किया । आपने अनेक काव्य-कृतियों की रचना की जिनमें–सामगान सहस्रधारा (दो-भाग), गीतायन, वैदिक विनय गीतमाला, वेद मंजरी गीतमाला, नवोपनिषद् पीयूष प्रभा (ओम् प्रतिष्ठान, नई दिल्ली द्वारा पुरस्कृत), आर्य भिविनय गीतमाला, ईशोपनिषद् प्रकाश (काव्यानुवाद), उपासना गीताञ्जलि, गायत्री गीताञ्जलि, ऋचाओं की छाया में, स्तुतामया वरदा वेदमाता, यजुर्वेद (गीतमय भावानुवाद) आदि प्रमुख है।

*आपकी पावन-स्मृति को नमन करते हुए, आपकी एक रचना प्रस्तुत है । –**सम्पादक**]*

विश्वानिदेव सवितर्दुतानि परासुव । यदभद्रं तन्न आसुव ॥
अग्ने नय सुपथा राये अस्मान् विश्वानि देव वयुनानि विद्वान् ।
युयोध्यस्मज्जुहराणमेनो भूयिष्ठां. तेनमः उक्ति विधेमः ॥

गीतिका

भगवान् दीन बन्धो ! वरदान ज्ञान दीजे ।
सम्पूर्ण दूर दुर्गुण करुणा निधान कीजे ॥
हर लीजिये दयामय अज्ञान का अंधेरा ।
विद्या प्रकाश दीजे जीवन महान् कीजे ॥

हों धीर वीर विनयी सब बाल बालिकाएं ।
ऊंचा चरित्र बल दो प्रतिभा प्रदान कीजे ॥
तज दें कुटिल कुपथ को सन्मार्ग पर चलें हम ।
कल्याण पद सुमति दो सुखका विधान कीजे ॥

कर्त्तव्य मार्ग से हम पीछे न पग उठायें ।
ऐसी महान् दृढ़ता ध्रुव ध्येय ध्यान दीजे ॥
मानव बने रहे हम परहित सदा निरत हो ।
कटुता हरें जगत् की माधुर्य दान दीजे ॥

संसार के रचयिता प्रभु वर जगत् पिता हे ।
तुम को नमन हमारा निज भक्ति दान दीजे ।
भगवान् दीन बन्धों सब भद्र दान दीजे ।
सब दूर दुष्ट दुर्गुण करुणानिधान कीजे ॥

www.thearyasamaj.org

आचार्य अभयदेव विद्यालंकार

*[वैदिक वाङ्मय के प्रकाण्ड विद्वान् तथा लेखनी के धनी पं० अभयदेव विद्यालंकार (पं० देवशर्मा 'अभय') का जन्म उत्तर प्रदेश के मुजफ्फरनगर जनपद के 'चरथावल' नगर में श्री पं० रामप्रसाद जी के यहां 2 जुलाई सन् 1896 को हुआ था । 1919 में आपने गुरुकुल कांगड़ी से विद्यालंकार की उपाधि प्राप्त की । आजन्म ब्रह्मचर्य व्रत धारण कर सन् 1938 में पुण्य-भूमि (गुरुकुल कांगड़ी की पुरानी भूमि) में जाकर संन्यास की दीक्षा ली। आपका सारा जीवन त्याग और तपस्या का प्रतीक था । आपने गुरुकुल कांगड़ी के आचार्यपद को भी सुशोभित किया था । आपने असहयोग आन्दोलन तथा राष्ट्रीय-आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाते हुए जेल यात्रा भी की । जेल का स्वाभाविक कठोर जीवन बिताते हुए और वहां के एकान्त का सेवन करते हुए ही आपने अपने अमूल्य बृहद ग्रन्थ "वैदिक विनय" की संरचना की थी । आपकी अन्य रचनाओं में तरंगित हृदय, ब्राह्मण की गौ, वैदिक उपदेशमाला, वैदिक ब्रह्मचर्य गीत, वेद रहस्य (श्री अरविन्द की पुस्तक का अनुवाद) प्रमुख हैं । आपका निधन 9 जनवरी सन् 1970 को स्वनगर चरथावल में हुआ । आपकी पुण्य तिथि पर आपका लेख "देश भक्ति" पाठकों की सेवा में प्रस्तुत है । **–सम्पादक**]*

देशभक्ति

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः । (अथर्व० 12-1-12)

ऋषि दयानन्द के जीवन से और वेद के उपदेश के अनुसार जिस देश-भक्ति के गुण का मैं इस महीने के लिए उल्लेख करना चाहता हूं, वह ऐसा गुण है जिसकी कि इस देश के (भारतवर्ष के) लोगों में विशेष कमी है । इसलिए जैसे कि प्रत्येक अन्य वैदिक धर्म के अंग में आर्यसामाजिक पुरुषों को अग्रणी होना चाहिए, वैसे ही इस देशभक्ति के आवश्यक गुण के विस्तार में भी आर्यसमाजी भारतवासियों को विशेषतया पथ-प्रदर्शक का काम करना चाहिये । यदि हम इस बात को समझेंगे तो हममें से प्रत्येक व्यक्ति अपने में देशभक्ति का गुण लाने का शीघ्र प्रबल यत्न करेगा ।

यह लिखने की जरूरत नहीं कि क्योंकि अभी तक आर्यसमाज भारत देश तक ही परिमित है और इस देश के सभी लोगों ने अभी तक देशभक्ति को अच्छी तरह नहीं सीखा है, अतः स्वभावतः मैं इस लेख में भारत देश की भक्ति का वर्णन करूंगा । इससे पाठक यही समझें कि मैं यह लेख भारतवासी वैदिक धर्मियों को दृष्टि में रखकर लिख रहा हूं, यद्यपि सामान्यतया कहा जा सकता है कि अन्य देशों में उत्पन्न होने वाले वैदिक धर्मियों को भी इन्हीं वैदिक सिद्धान्तों के अनुसार अपनी देशमाता की सेवा करनी चाहिए और इस महान् धर्म का पालन करते हुए सामाजिक सुख-सम्पत्ति बढ़ाकर वैयक्तिक सुख-सम्पत्ति भी पाकर कृतकृत्य होना चाहिए ।

हममें देशभक्ति की कमी क्यों है ? इसका कारण यही समझ में आता

www.thearyasamaj.org

है कि हमने अपने हृदय को फैलाया नहीं है, अपनी दृष्टि को विस्तृत नहीं किया है । मैं चाहा करता हूं कि हर एक भारतवासी अपने विशाल घर को देखे और वहां अपनी वेदोक्त माता का दर्शन करे । यदि मैं आपसे आपका घर पूछूं तो शायद आप अपने छोटे-से चारदीवारी से घिरे हुए घर की तरफ इशारा करेंगे और अपने दो-चार भाई-बहनों की जननी को माता कहकर बतलायेंगे । परन्तु हमें इससे ऊपर उठना है और उठकर जिस अपने विशाल घर की वन्दनीयता माता को देखना है वह कुछ और है । इसके लिए अपने हृदय को दूर तक विस्तृत कीजिये, दिल को खोल दीजिए । यदि आप इस असली माता को देखना चाहते हैं तो ऐसा ही करना होगा । तब आप देखेंगे कि हमारा विस्तृत घर वह है जो कि कश्मीर से कन्याकुमारी तक और कच्छ से कामरान तक फैला हुआ है, जिसमें कि पंजाब, उत्तर प्रदेश, बंगाल, मद्रास आदि प्रान्त ऐसे हैं जैसे कि एक घर के कई कमरे होते हैं । इस घर में दो-चार नहीं, किन्तु 40 करोड़* बहिन-भाई बस रहे हैं । क्या अपने अब अपनी माता को देखा ? इस 40 करोड़ हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख व ईसाई आदि भाई-बहिनों की जननी अपनी वृद्धा माता को पहिचाना ? यह वह माता है जिसकी सेवा के लिए यदि जरूरत हो तो हमें अपनी दो-चार भाई-बहनों की माता को त्याग देना चाहिए और अपने क्षुद्र घर का बलिदान कर देना चाहिए । यह वह माता है जिसे अभी तक न पहचानने और अतएव उसकी सेवा में तत्पर न होने के कारण हम अनगिनत दुःख और विपत्ति उठा रहे हैं और दुनिया में अपना सिर ऊंचा उठाकर नहीं रह रहे हैं और जिसकी एकमात्र सेवा से ही फिर हमारा उद्धार हो सकता है । यही सेवा किये जाने योग्य और वन्दना किये जाने के योग्य हमारी माता है । "वन्दे मातरम" की पवित्र ध्वनि उठाकर देशभक्त लोग इसी माता को नमस्कार करते हैं । आइये वैदिक धर्मी बन्धुगण! हम इस माता के आगे सिर झुकायें और वेद के शब्दों में अनुभव करें–

माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्याः ।

"यह मातृभूमि मेरी माता है और मैं इस विस्तृत पृथिवी का पुत्र हूं ।"

यह अथर्ववेद के प्रसिद्ध पृथिवी-सूक्त का एक वाक्य है, जो कि इतना स्पष्ट है कि एक संस्कृत न जाननेवाला भी इसका अर्थ समझ सकता है । इस सूक्त में मातृभूमि-विषयक बड़ा ज्ञान लिखा हुआ है, परन्तु हम तो यदि केवल इस एक वेदवाक्य को ही अपना लें और इससे यह समझ जावें कि यह भूमि हमारी माता है और हम सब इसके पुत्र हैं तो हम कुछ-के-कुछ बन जायें, हर एक भारतवासी को अपना भाई समझने लगें, जैसे अपने माता-पिता, गुरु, परमात्मा आदि के प्रति हमारे कर्तव्य हैं वैसे ही इस देश-माता के प्रति भी अपने आवश्यक कर्तव्यों को समझने लगें और इसकी सेवा के लिए अपना सब-कुछ अर्पण करने को भी तैयार जो जायें । *(क्रमशः)*

* जनसंख्या की दृष्टि से अब सवा अरब के लगभग ।

www.thearyasamaj.org

गतांक से आगे–

महर्षि का ईश्वर प्रत्यक्ष

–स्व० आचार्य विश्वदेव शास्त्री

स्वप्नावस्था में चक्षुरादि इन्द्रियां मन में समाहित हो जाती हैं अर्थात् मन में समा जाती हैं । प्रमाण के लिए देखें–

तस्मै स होवाच–

यथा गार्ग्य मरीचयोऽर्कस्यास्तं गच्छतः सर्वा एतस्मिंस्तेजोमण्डले एकी भवन्ति । ताः पुनरुद्रयतः प्रचरन्त्येवं ह वै तत्सर्वं परे देवे मनस्येकी भवन्ति । तेन तर्ह्येष पुरुषो न पश्यति न जिघ्रति न रसयते न स्पृशते नाभिवदते नानन्दयते न विसृजते नेयायते स्वपितीत्याचक्षते ॥ –प्रश्न० 42

गार्ग्य यथा अस्त होते हुए सूर्य की सब किरणें इस तेजः स्वरूपः सूर्यमण्डल में लीन हो जाती हैं । जैसे कछुआ अपने अवयवों को शरीर में कर लेता है वैसे उसी में मिल जाती हैं । वे किरणें फिर नित्य प्रातः काल उदय होते सूर्य के साथ ही फैलती हैं । उसी प्रकार वे सब नेत्रादि इन्द्रियां अपने से सूक्ष्म मन में लीन हो जाती हैं । (अर्थात् समाहित=समा जाती हैं ।)

मन मनुष्य के सब कार्यों का साधक है, बुद्धि और मन के बिना किसी वस्तु का ज्ञान नहीं किया जा सकता । अतः ईश्वर प्रत्यक्ष के लिए बुद्धि और मन की आत्मा के साथ एकवाक्यता आवश्यक है ।

ईश्वर प्रत्यक्ष कैसे है ? :

दर्शन=देखना सदा आंखों के द्वारा ही होता है । ये आंखें बाह्य रूपादि के दर्शन की ही अभ्यस्त हैं, बाह्य वस्तुओं को ही देखती हैं । क्या ये अन्दर भी देख सकती हैं ? उपनिषदादि शास्त्रों में बहुधा प्रभु के दर्शन का वर्णन किया है । यथा–

तमक्रतुः पश्यति वीतशोको धातुः प्रसादान्महिमानमात्मनः ॥
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरा स्तेषां सुखं शाश्वतं नेतरेषाम् ॥
तमात्मस्थं येऽनुपश्यन्ति धीरास्तेषां शान्तिः शाश्वती नेतरेषाम्॥
–कठ० 5।12

कश्चिद् धीरः प्रत्यगात्मानमैक्षदावृत्तचक्षुरमृतत्वमिच्छन् । –कठ० 4।1
नित्यं विभुं सर्वगतं सुसूक्ष्मं तदव्ययं यद्भूतयोनिं परिपश्यन्ति धीराः ॥
–मुण्डक० 1।1।56

भिद्यते हृदयग्रन्थिश्छिद्यन्ते सर्वसंशयाः ।
क्षीयन्ते चास्य कर्माणि तस्मिन् दृष्टे परावरे ॥ –मुण्डक० 2।8
ज्ञानप्रसादेन विशुद्धसत्वस्ततस्तु तं पश्यते निष्कलं ध्यायमानः। –मुण्डक 3।18
आत्मा वा अरे श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः। –बृहदारण्यक 4।5।6
एष सर्वेषु भूतेषु गूढात्मा न प्रकाशते ।
दृश्यते त्वग्र्या बुद्ध्या सूक्ष्मया सूक्ष्मदर्शिभिः ॥ *(क्रमशः)*

www.thearyasamaj.org

(पृष्ठ 8 का शेष)

करा दिया जाय और कारखानों के मालिकों को अपने मजदूरों के लिए मनुष्योचित परिस्थितियां निर्माण करने तथा उनके हित में ऐसे उपहार गृह और मनोरंजन गृह खोलने के लिए मजबूर किया जाय, जहां मजदूरों को ताजगी देने वाले निर्दोष पेय और उतने ही निर्दोष मनोरंजन प्राप्त हो सकें ।

यंग इण्डिया-25.6.31

संतति नियम

संतति के जन्म को मर्यादित करने की आवश्यकता के बारे में दो मत हो ही नहीं सकते । परन्तु इसका एक मात्र उपाय है आत्मसंयम या ब्रह्मचर्य, जो कि युगों से हमें प्राप्त है । हिन्दी नवजीवन 12.3.25

अस्पृश्यता

जो धर्म अस्पृश्यता को मानता या तदनुसार बरतता है, वह धर्म नहीं अधर्म है और नाश के योग्य है । य० मं० 71

महात्मा गांधी की मृत्यु 1948 में हुई थी । इस घटना को 65 वर्ष बीत चुके हैं । चाहिए तो यह था कि अब तक सर्वत्र उक्त विचार क्रियान्वित हो जाते, पर लगता है कि सभी सरकारें और राजनेता उनके विचारों को भूल गये हैं । जब उनके विचारों का सर्वत्र प्रचार-प्रसार क्रियान्वयन होगा, तभी महात्मा गांधी जन्म दिवस एवं स्मृति दिवस मनाना सार्थक होगा ।

–सम्पादक

आर्य साहित्यसेवी विश्वकोश

दस खण्डों में प्रस्तावित 'आर्यसाहित्य सेवी विश्वकोश' का लेखन कार्य प्रगति पर है । सुविज्ञ पाठकों से विनम्र निवेदन है कि यदि उन्होंने अपना परिचय, चित्र तथा लेखन-कार्य का विवरण अभी तक नहीं भेजा है, तो कृपया अपना परिचय शीघ्र भेजें जिसमें नाम, चित्र, माता-पिता का नाम, पति/पत्नी का नाम, जन्मस्थान और जन्म तिथि (निधन स्थान और निधन तिथि केवल दिवंगत के लिए), जीवन के उल्लेखनीय प्रसंग, लेखन कार्य का विस्तृत परिचय आदि कृपया शीघ्र भेजें । *–सम्पादक*

प्रकाशक-मुद्रक-स्वामी-मूलचन्द गुप्त द्वारा सम्पादित, तथा वैदिक प्रेस, 995/51, गली नं०17, कैलाशनगर, दिल्ली-31 (फोन-22081646) से मुद्रित कराकर, ओम् प्रतिष्ठान, कुसुमालय, बी-1/27, रघुनगर, पंखा रोड, नई दिल्ली- 45, से प्रकाशित किया । न्यायक्षेत्र–दिल्ली ।